अर्बुदांजलिः

स्वामी ईश्वरानन्द गिरि

अर्बुदांजलिः

अर्बुदाचल के १०८ नामों का
स्तोत्र - नामावलि - व्याख्या

स्वामी ईश्वरानन्द गिरि
संवित् साधनायन
आबू पर्वत

■ **प्रकाशक :**
संवित् साधनायन
संतसरोवर, माउन्ट आबू
राजस्थान - ३०७५०१ (भारत)

■ © प्रकाशक

■ **प्रथम संस्करण :** १००० प्रतियाँ
महाशिवरात्रि, २००८

■ **टाईप सेटिंग**
हितेश शाह
फोन : ९९२४० ९४६९३

■ **मुद्रक :**
विपुल प्रिन्टर्स, अहमदाबाद
फोन : २५६२२४६२

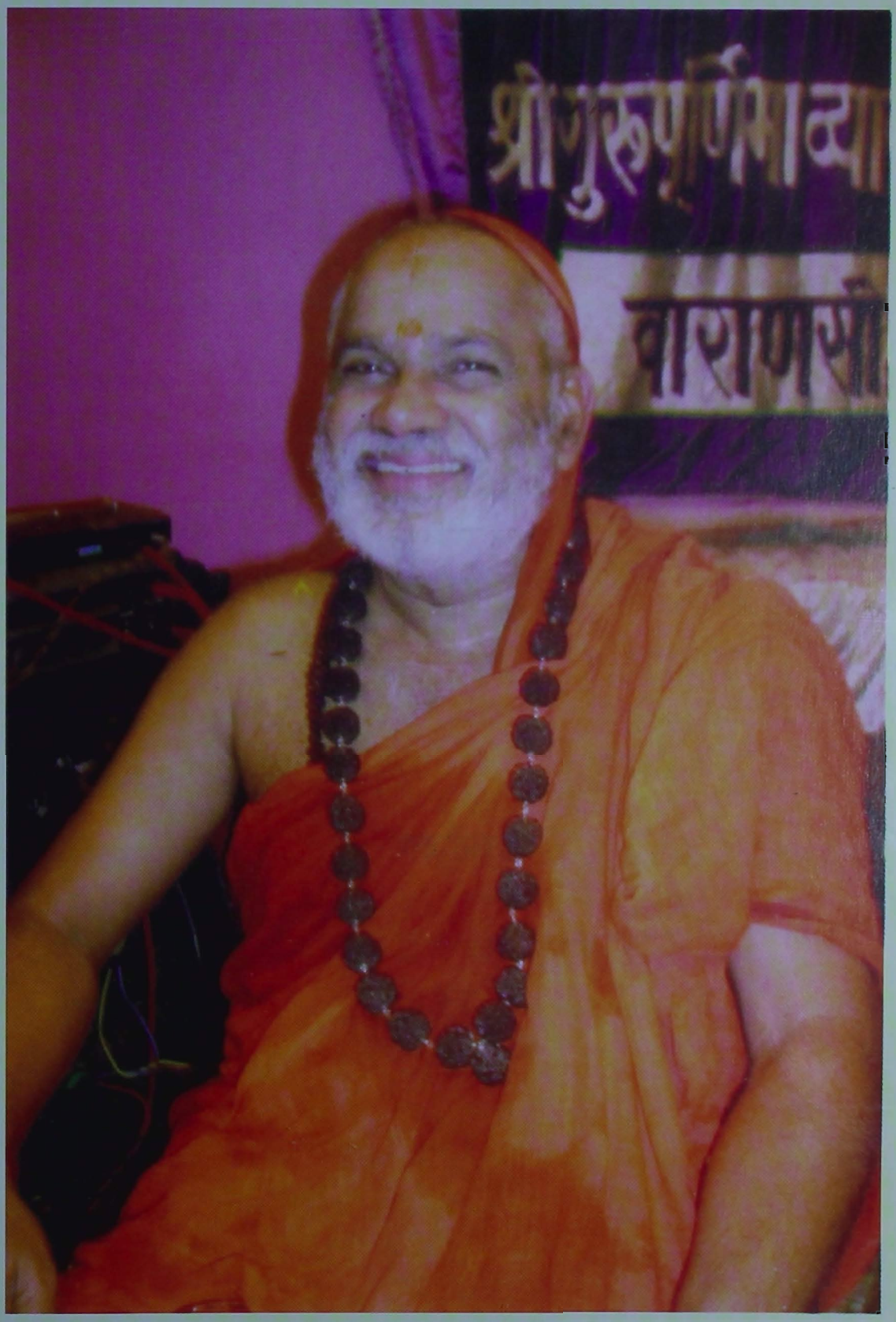

"सन्तुष्टः सततं योगी"

समर्पण

ब्रह्मलीन स्वामी श्रीशंकर संविद् गिरि
की स्मृति में
समर्पित

प्रायोजक

श्रीमती पद्मा जोशी (बुआ)
एवं
श्री विनय नगोरी

विषयानुक्रम

दो शब्द 6

अर्बुदांजलिः स्तोत्रम् 9

अर्बुदाष्टोत्तरशत–नामावलिः 12

विशेष–व्याख्या 15

प्रदक्षिणांजलिः 20

श्री कैलासांजलिः स्तोत्रम् 24, 26

भावार्थ 25, 27

श्रद्धांज़लिः (अंग्रेजी में) 28

दो शब्द

गत वर्ष शिवरात्रि पर अर्बुदाचल के साधनायन के मुख्य केन्द्र में "अमृतोत्सव" का छठा महोत्सव हुआ। उसके अन्तःपाति विशेष कृत्यों में प्रधानस्य से अर्बुदाचल की परिक्रमा का आयोजन था। उसके लिए "संन्यास सुवर्ण जयन्ती" की उपलक्ष्णा में ५० संवित् साधक चुने गये थे। परन्तु उससे भी अधिक सम्मिलित हुए। इस पदयात्रा मे पाँच पड़ाव थे। हर एक पड़ाव पर स्थित तीर्थ की पूजा-अर्चना-स्तुति आदि साधकोंने भक्तिपूर्वक की। उस समय मेरे मन में विचार आया कि जिस देवतात्मा पर्वत की परिक्रमा हो रही है, जो इन अनेकोनेक देवों को आश्रय दे रहे हैं, उनकी तो पूजा-अर्चना अवश्य होनी चाहिए। इस विचार फलस्वरुप हमारे मानस मे कई अद्‌भुत नाम स्फुरित होने लगे। परिक्रमा के चतुर्थ दिवस प्रसिद्ध "वासतान" गुहामन्दिर मे हरि-हर भगवान की पूजा के अनंतर हमने उन अर्बुद-नामों से अर्बुदाचल की अर्चना की। सबको अच्छा लगा। बाद में अवकाश पाकर हमने उन नामों को १०८ संख्या में संग्रहित कर श्लोकबद्ध स्तुति रूप दिया। "अर्बुदाजंलि" के नाम से महाशिवरात्रि पर इसका लोकार्पण करने जा रहे हैं।

इसके साथ इस प्रकाशन में अर्चना की सुविधा के लिए नामावली भी

दी गई है। कुछ नामों की रचना के पीछे निहित इतिहास या संकेत से अनभिज्ञ के लिए उन नामों की विशेष व्याख्या भी जोड़ दी गई है।

मैं स्वभाव से पहाड़ का पूजक हूँ। हर एक पर्वत में मुझे शिवलिंग भासित होता है। परन्तु चार पर्वतों का मेरे अन्दर अत्यन्त विलक्षण प्रभाव पड़ा है। उनमें प्रमुख श्री कैलास पर्वत है। उनका नमन स्तवन करने के लिए पर्याप्त साहित्य नहीं मिलने से "कैलासांजलि" का सृजन हुआ। उसको भी भावार्थ सहित यहाँ प्रकाशित कर रहें है।

सन् २००७ के अन्त में संवित् साधनायन को एक अप्रत्याशित अनिष्ट आघात लगा, जब स्वामी संवित् शंकर गिरि का निधन हुआ। संन्यास व्रत ग्रहण करके सन्तसरोवर आए उनको सात साल ही हुए थे। संपूर्णतया संवित् को समर्पित उनके इस जीवन-काल में, साधनायन की सभी प्रवृत्तियों में, उनका श्लाघनीय सहयोग रहा। Neuroscientist एवं योग शिक्षक होने से वे मानसिक एवं शारिरिक समस्यायों को लेकर आनेवाले साधकों के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध हुए। पर सबसे अधिक सुखद बात यह थी कि वे आश्रम की प्रवृत्तियों में और उत्सवों में भाग लेने वाले जन समुदाय के सभी वर्गों को-चाहे बालक, युवा, प्रौढ़ या वृद्ध हों-लोकप्रिय लगे। ऐसा उनका मधुर स्वभाव था। वे एक सरल साधु-पुरुष थे और उन्होंने संन्यास धर्म को तथा संवित् साधना को अन्त तक निभाया। यही मेरे लिए प्रसन्नता का विषय था।

२६ दिसम्बर को सन्तसरोवर आश्रम में षोडशी भण्डारा भव्य रूप से संपन्न हुआ और उसी समय श्रीमती पद्मा जोशी (बुआ)ने हमसे प्रार्थना की कि शंकर स्वामी की स्मृति में एक प्रकाशन का प्रायोजक बनने की अनुमति उन्हें मिले। उसको स्वीकारते हुए हमने निकटतम अवसर श्री महाशिवरात्रि पर प्रकाशनार्थ "अर्बुदांजलि" पुस्तक को स्वामी संवित् शंकर गिरि की स्मृति में समर्पित करने का निश्चय किया। इस पुस्तिका के लिए दिवंगत स्वामी की एक लघु श्रद्धांजलि हमने अंग्रेजी में लिखी है, क्योंकि उनके बहुसंख्यक अनुयायी दक्षिण भारतीय हैं जो हिन्दी से अनभिज्ञ हैं। इसके साथ श्री शंकर स्वामी के यति-जीवन के कुछ महत्त्वपूर्ण दृश्यों के चित्र भी सम्मिलित हैं।

इस सामग्री को आकर्षक ढंग से सजाने का और प्रकाशित करने का पूरा भार कर्णावती के साधकवर श्री सुधीर सराफ ने उठाया। उनको एवं प्रायोजक श्रीमती पद्मा जोशी तथा श्री विनय नगोरी को यति कुलनायक जगद्गुरु श्रीभगवत्पादाचार्य का अनुग्रह प्राप्त हो।

आशा है, अर्बुदाचल से आकर्षित एवं जुड़े हुए संवित् साधक, ''अर्बुदाजंलि'' का सभक्ति प्रयोग कर आनन्दित एवं लाभान्वित होंगे।

वसन्त पंचमी
विक्रम २०६४

सर्वं शिवम् इति
ईश्वरानन्द गिरि

अर्बुदांजलिः स्तोत्रम्

अर्बुदाख्योऽचलदेवो ह्यर्बुदाहिसखोत्तमः ।
अर्बुदादेव्यधिष्ठित-श्चाचलेश्वरपालितः ॥१॥
आगमस्तुतसत्कीर्तिः अद्भुताकृतिपर्वतः ।
अनेकाश्रमसंकुल-श्चानेकगुहगुह्वरः ॥२॥
अंजनीरंजनश्चात्रि-भृग्वादिऋषिसेवितः ।
अरुन्धत्यनसूयादि-मातृवत्सलपोषितः ॥३॥
आग्नेयोऽग्निशरणद-श्चाग्निवंशनृपप्रसूः ।
अमोघस्वप्रदक्षिण-श्चाभयारणयलक्षणः ॥४॥
आपूरितमहागर्तः औषधीनॉमहानिधिः ।
आम्रवनो जम्बूवनः पलाशवनमंडितः ॥५॥
पारिभद्र-पुष्परागः पद्मपुष्कर-भूषितः ।
पार्वतीसोदरः पूतः पश्चिमाद्रिः कृपाकरः ॥६॥
कांचनार-करवीर-चम्पकस्त्रक्सुसज्जितः ।
कुमारीक्षेत्रमूर्धन्यः कलिंगदनुजान्तकः ॥७॥
कात्यायनी-शक्तिपीठः श्रीपीठश्चाधरपीठः ।
कुमारीपादुकापीठो नागपीठो निरामयः ॥८॥
नानारत्नांचितो नागवलयो नागवाहनः ।
नमज्जनतमोहारी निर्वेदज्ञानवर्धकः ॥९॥

नीलमेघपताकश्रीः तुलनाहीनवैभवः ।
तुहिनाचलसुतस्तुंग-शृंगस्तापनिवारकः ॥१०॥
हृषीकेशमुखद्वारो मधुसूदनमानदः ।
देवांगन-सुनूपुरो देवक्षेत्रपुरस्कृतः ॥११॥
सूर्यमन्दिर-शोभाढ्यः सरस्वतीजलाप्लुतः ।
संसिद्धीनां मानदंडः सिद्धमातासुलालितः ॥१२॥
भीमालयांकितशीर्षः खर्जूरतरुसज्जितः ।
भिल्लकुलजनासेव्यो रघुनाथनिकेतनः ॥१३॥
सोमनाथदिद्वादश-ज्योतिर्लिंग-प्रभान्वितः ।
सोमसूर्याग्नित्रिकुण्डो नागतीर्थादि-पावितः ॥१४॥
केदारकाशिकेन्द्रादि-सुरालयसमावृतः ।
कलिप्रभावजाशेष-दोषस्पर्श-विवर्जितः ॥१५॥
ऋक्षवंश-सरंक्षको वानरौघविलासभूः ।
ऋषिप्रसादितः सौम्यः सुलभः सिद्धिदायकः ॥१६॥
गुरुरूपधरो दत्त-गुरुपादशिरोमणिः ।
गुरुनिष्ठो गुरुगम्यो गुरुगौरवमंडितः ॥१७॥
गूढ़वीर्यो गुप्तचारी गुरुद्रुहगतिप्रदः ।
गुरुपादानुगमनो गणाध्यक्षसुरक्षितः ॥१८॥

शान्तिनाथ-मुनिसेव्यः शिवपादप्रतिष्ठितः ।
शश्वज्झंकृतचिद्वीणः शश्वद् यौवन सुन्दरः ॥१९॥
मंगलीकृतमरुभूः महामौनी दृढव्रतः ।
धर्मसंग्रामविजयी धर्मनिष्ठादृढीकरः ॥२०॥
वसिष्ठदत्तवराढ्यो वसिष्ठाश्रममूलकः ।
श्रुत्यन्तसंस्कृतिस्तंभः क्ष्मानाथपूगसंश्रयः ॥२१॥
युगंधरो युगकर्ता यतिसंघसहायकः ।
यमादिसाधनातुष्टो यमयात्रानिवर्तकः ॥२२॥
संविद्देवी-सुमांगल्यः संविन्मुकुरसन्निभः ।
संवित्-सुधामत्तसाधू भृंगपद्ममहावनः ॥२३॥
संवित्साधकवल्लभः साधनायन-बीजभूः ।
समावेश-शतस्फूर्तिः सामरस्यरसात्मकः ॥२४॥
शिवाशिवहरिरूपी शिवशैलशिखामणिः ।
शिलायितब्रह्मसंवित् स्तुत्यानया प्रसीदतु ॥२५॥
ईश्वरानन्दयतिना स्वात्मप्रासादके गुरौ ।
अगजासहजेर्बुदे श्रद्धाभक्तिप्रदर्शिका ॥२६॥
अष्टोत्तरशतनाम-संवित्सुमसुगुंफिता ।
अर्बुदांजलिरित्येषा स्तुतिमाला समर्पिता ॥२७॥

इति अर्बुदांजलिस्तोत्रं संपूर्णम्

अर्बुदाष्टोत्तरशत-नामावलिः

ॐ अर्बुदाख्याय नमः
अचलदेवाय
अर्बुदाहिसखोत्तमाय
अर्बुदादेव्याधिष्ठिताय
अचलेश्वरपालिताय
आगमस्तुत-सत्कीर्तये
अद्भुताकृति पर्वताय
अनेकाश्रम-संकुलाय
अनेकगुहगृह्वराय
१० अंजनीरंजनाय
अत्रिभृग्वादिऋषिसेविताय
अरुन्धत्यनसूयादि-
मातृवात्सल्यपोषिताय
आग्नेयाय
अग्निशरणदाय
अग्निवंशनृपप्रसवे
अमोघ-स्वप्रदक्षिणाय
अभयारण्य-सुलक्षणाय
आपूरित-महागर्ताय
औषधीनॉ महानिधये
२० आम्रवनाय

ॐ जम्बूवनाय नमः
पालाशवनमंडिताय
पारिभद्र-पुष्परागाय
पद्मपुष्कर-भूषिताय
पार्वतीसोदराय
पूताय
पश्चिमाद्रये
कृपाकराय
काञ्चनार-करवीर-चंपक-
स्रक्-सुसज्जिताय
३० कुमारीक्षेत्रमूर्धन्याय
कलिंगदनुजान्तकाय
कात्यायनी-शक्तिपीठाय
श्रीपीठाय
अधरपीठाय
कुमारीपादुका-पीठाय
नागपीठाय
निरामयाय
नानारत्नाञ्चिताय
नागवलयाय
४० नागवाहनाय

ॐ नमज्जन-तमोहारिणे नमः
निर्वेदज्ञानवर्धकाय
नीलमेघ-पताकश्रिये
तुलनाहीन-वैभवाय
तुहिनाचलसुताय
तुंगशृंगाय
तापनिवारकाय
हृषीकेश-मुखद्वाराय
मधुसूदन-मानदाय
५० देवांगन-सुनूपुराय
देवक्षेत्र पुरस्कृताय
सूर्यमन्दिर-शोभाढ्याय
सरस्वती-जलाप्लुताय
सिद्धमाता-सुलालिताय
संसिद्धीनां-मानदण्डाय
भीमालयांकित-शीर्षाय
खर्जूरतरु सज्जिताय
भिल्लकुल-जनासेव्याय
रघुनाथ-निकेतनाय
६० सोमनाथादि-
द्वादशज्योतिर्लिंग-
प्रभान्विताय

ॐ सोमसूर्याग्नित्रिकुण्डाय नमः
नागतीर्थादिपाविताय
केदार काशिकेन्द्रादि-
सुरालय-समावृताय
कलिप्रभावजाशेष-
दोषस्पर्श-विवर्जिताय
ऋक्षवंश-संरक्षकाय
वानरौघ-विलासभुवे
ऋषिप्रसादिताय
सौम्याय
सुलभाय
७० सिद्धिदायकाय
गुरुरूपधराय
दत्तगुरुपादशिरोमणये
गुरुनिष्ठाय
गुरुगम्याय
गुरुगौरव मंडिताय
गूढवीर्याय
गुप्त चारिणे
गुरुद्रुह-गतिप्रदाय
गुरुपादानुगमनाय
८० गणाध्यक्ष सुरक्षिताय

ॐ शान्तिनाथ-मुनिसेव्याय नमः
शिवपाद प्रतिष्ठिताय
शश्वज्झंकृत-चिद्वीणाय
शश्वद् यौवन-सुन्दराय
मंगलीकृत मरु भुवे
महामौनये
दृढव्रताय
धर्मसंग्रामविजयिने
धर्मनिष्ठादृढीकराय
९० वसिष्ठदत्तवराढ्याय
वसिष्ठाश्रममूलकाय
श्रुत्यन्तसंस्कृतिस्तंभाय
क्ष्मानाथपूग संश्रयाय
युगंधराय
युगकर्त्रे

ॐ यतिसंघ सहायकाय नमः
यमादिसाधनातुष्टाय
यमयात्रा-निवर्तकाय
संविद्देवी-सुमांगल्याय
१०० संविन्मुकुर-सन्निभाय
संवित् सुधामत्त-
साधूभृंग-पद्ममहावनाय
संवित् साधक-वल्लभाय
साधनायन-बीजभुवे
समावेश-शतस्फूर्तये
सामरस्य-रसात्मकाय
शिवा-शिव-हरिरूपिणे
शिवशैलशिखामणये
१०८ ॐ शिलायित ब्रह्मसंविदे नमः

विशेष व्याख्या

(अर्बुदाष्टोत्तरशत नामावलि में प्रायः सभी नाम स्पष्टार्थ हैं । जिनका विशेष उल्लेख करना आवश्यक है, उनका विवरण यहाँ दे रहे हैं ।)

नाम-संख्या — **व्याख्या**

३. अर्बुदाहि सखोत्तम :-

अर्बुदगिरि का वास्तविक नाम नन्दिवर्धन था । उसका प्रिय सखा अर्बुद नाम का नाग था, जिसकी सहायता से ही वसिष्ठ ऋषि नन्दिवर्धन पहाड़ को, मरुभूमि में स्थित अपने आश्रम तक ले जा सके । इस सेवा के लिये अर्बुद नाग को वसिष्ठ ने वर मांगने को कहा तो अर्बुद ने अपने मित्र के साथ वहीं रहने की अनुमति और नन्दिवर्धन पहाड़ को भी अर्बुद नाम से प्रसिद्ध कराने की याचना की । इस प्रकार सखित्व का उत्तम आदर्श स्थापित हुआ ।

१३. आग्नेय :-

ज्वालामुखी रूप से अर्बुदाचल प्रकट हुआ था । अतः वह पहाड "आग्नेय" (ignatious) वर्ग के पत्थरों से बना हुआ है ।

१४. अग्निशरणद :-

अग्निदेव किसी कारणवश विश्वामित्र ऋषि के प्रकोप से बचने के लिये छिपके रहना चाहते थे, तो अर्बुदारण्य ने ही उनको शरण दी । वह स्थान "**अग्नेश्वर**" नाम से जाना जाता है ।

१५. अग्निवंशनृपप्रसू :-

अर्बुदाचल स्थित अपने आश्रम के यज्ञ-कुंड से श्री वसिष्ठजी ने ४ प्रकार के क्षत्रिय कुलों को उत्पन्न किया था, जो पश्चिम भारत में धर्म

रक्षा के कार्य में नियुक्त हुए । इन अग्निवंशी राजाओं की प्रसवभूमि आबू है ।

१६. अमोघ प्रदक्षिण :-

पुराणों की कई आख्यायिकाओं में बताया कि आबू पर्वत की प्रदक्षिणा (परिक्रमा) जो करता है उसे अक्षय पुण्य प्राप्त होता है ।

१८. आपूरित महागर्त :-

उत्तंक महर्षि अमृत-कुंडल की खोज में नाग-लोक गए थे । उस मार्ग में एक भारी पाताल मुख गढ्ढा हो गया था । उसको भरने के लिये ही आबू पहाड़ को हिमालय से उठाकर वसिष्ठ ऋषि लाये थे ।

२९. कांचनार-करवीर-चंपक-स्त्रक्-सुसज्जित :-

बीसवें नाम से यहाँ तक, आबूपर्वत में विद्यमान कुछ प्रमुख वृक्षों का उल्लेख है । पारिभद्र (फलोदेरा) के लाल पुष्प, कांचनार (कछनार) के नीले फूल, कनेर के कई रंग के पुष्प, चंपा के बृहत्तरु - सब वसन्त के बाद एक-एक करके खिलते हैं, तब फूलों से भरी वृक्षावलि को देख कर लगता है कि पर्वत कई रंग की माला से सजाया गया है ।

३०-३५ यहाँ से नाम ६३ तक आबू पर्वत में स्थित प्रधान तीर्थ-मन्दिर आदि पुण्य स्थानों का उल्लेख है । पुराणानुसार "**कुमारी क्षेत्र**" नाम से अभिहित भूभाग आबू से लेकर जोधपुर तक विस्तृत है । उसका सबसे उत्तम व उन्नत स्थान आबू-पर्वत है ।

कलिंग नामक दैत्य, शस्त्रों से अवध्यता वर प्राप्त कर, पश्चिम भारत में धर्मावलम्बियों पर अत्याचार करता था । भक्तों की प्रार्थना पर भगवती कुमारी रूप से प्रकट होकर अर्बुदगिरि की बृहत् शिला को उस असुर के ऊपर डाल कर उसको दबा दिया । वहाँ से अदृश्य होकर भगवती एक गुहा में कात्यायनी के रूप में विराजमान हो

गई । इसी को अधर-पीठ या कात्यायनी पीठ से आजकल पूजते हैं । कुमारीरूप से भगवती ने श्रीविद्या का उपदेश दिया था । वहाँ एक शिला पर कुमारिका के श्रीपादुका चिन्ह विद्यमान हैं ।

७२-७५ "**गुरु शिखर**" नाम से आजकल प्रसिद्ध स्थल में गुरु दत्तात्रेय की श्री पादुकायें प्रतिष्ठित हैं । यह शिखर अर्बुद पर्वत का सर्वोन्नत स्थान है । अतः इसे अर्बुद का "**शिरोमणि**" कहा है ।

"**गुरु निष्ठ**" में गुरु शब्द से वसिष्ठ ऋषि का ग्रहण है । उनके आदेशानुसार ही अर्बुद का पश्चिम भारत में आना हुआ ।

"**गुरु गम्य**" में गुरु शब्द से कोई भी महापुरुष को ले सकते हैं जिनके प्रमाण से ही इस पर्वत का महत्त्व समझ में आ सकेगा ।

"**गुरु गौरव मण्डितः**" इस नाम में गुरु शब्द का सरल अर्थ है 'भारी' । अर्बुद देखने में लघु पर्वत है पर वास्तव में अत्यन्त गंभीर गौरव सम्पन्न है । इसलिये भी यह गुरुगम्य है । इसका प्रभाव साधारण लोगों के लिये अदृश्य है, अतः "**गूढवीर्यः**" है ।

हिमालय से चलकर मरुधरा-गूर्जर देश के बीच आने का अर्बुद-मार्ग एक रहस्य बना हुआ है । प्रतीत होता है कि यह आकाशमार्ग से चलकर नहीं आया, अपितु पाताल मार्ग से ही यहाँ प्रकट हुआ होगा । इस दृष्टि से अर्बुद नाग की भूमिका भी समझ में आती है । वैज्ञानिक भी यही मानते हैं कि भूगर्भ से उठकर ही यह पर्वत आया है । अतः इसे "**गुप्तचारी**" कहा है ।

७८. शिवपुराण में शिवरात्रि महिमा बताते हुये एक भील का वृतान्त है । उसका नाम गुरुद्रुह था और वह अनजान में शिवरात्रि के दिन उपवास, शिव पूजन करते हुए, उसके शिकार हरिणों पर दया की और उनको मारने से विरत हुआ । फलस्वरूप भगवान शंकर ने प्रकट होकर दर्शन दिये । यह घटना अर्बुदाचल में ही हुई थी । अतः अर्बुद को "**गुरु-द्रुह गतिप्रद**" कहा है ।

८२. शिवपाद प्रतिष्ठित :-

पुराणानुसार वशिष्ठ ऋषि ने जब नन्दिवर्धन पहाड़ को आबू के रूप में प्रतिष्ठित किया तब उस पर सभी देव, तीर्थ, ऋषिकुलों का आवाह्न करना चाहते थे । इस उद्देश्य से प्रथमतया उन्होंने अपने आराध्य श्री उमापति भगवान शंकर की प्रार्थना कर उनका दर्शन-वर प्राप्त किया। भगवान शंकर वहां अचलेश्वर नाम से प्रतिष्ठित हुए। आजकल अचलेश्वर में शिवपादांगुष्ठ आकृति के गर्भलिंग पूजित हैं । शिवपाद से ही अर्बुद पर्वत की प्रतिष्ठा हुई ।

८३. शश्वत्-झंकृत-चिद्वीण :-

आबू पर्वत पर साधक कहीं भी जाए वहाँ यदि जागृत होकर ध्यानपूर्वक सुने तो उसको एक सूक्ष्म नाद की गूंज सतत सुनाई देगी । इसमें मन को एकाग्र करने से समाधि का अभ्यास सरल होता है। अतः हमेशा झंकृत होनेवाली चिद्रूपी वीणा कह कर अर्बुद का वर्णन किया ।

८८. धर्म संग्राम विजयी :-

मध्यकाल में उत्तर भारत से आये यवन आक्रमणकारियों ने गुजरात में एवं दक्षिण भारत में प्रवेशकर मन्दिरों का ध्वंस किया। उस समय अर्बुदाचल अचलगढ़ के आसपास के क्षेत्र में राजस्थान के राजाओं ने अधर्मियों के विरुद्ध अनेक संग्राम किये और बहुत कुछ धार्मिक स्थानों को आक्रमण-विनाश से बचाने में सफल हुए ।

९३. श्रुत्यन्त संस्कृति स्तंभ :-

उपर्युक्त कारण से ही अबुर्द पर्वत को श्रुत्यन्त (वेदान्त) संस्कृति का रक्षक-स्मारक स्तंभ माना है ।

९९. संवित् देवी-सुमांगल्य :-

मांगल्यसूत्र बन्धन से कन्या का विवाह-संस्कार सम्पन्न होता है और

वह कुटुम्ब की स्वामिनी बनने योग्य होती है । इसी प्रकार संवित्-स्वरूपिणी विद्या को शिवरूपी ब्रह्म के साथ प्रामाणिक रूप से संबन्ध होने के लिये श्रवण-मनन-निदिध्यासन साधना चाहिये । वही मंगलसूत्र है । अर्बुद पर्वतावली इस साधना के मूर्तिमान विग्रह या आयतन होने से उसे संवित्देवी का सुमांगल्य कहा है ।

१००. संविन् मुकुर सन्निभ : -

अर्थात्, संवित्-दर्पण जैसा । संवित्-दर्पण के सामने आने पर अपना संवित् स्वरूप भासित होगा । वैसा ही प्रभाव अर्बुद में निवास, उसकी उपासना व साक्षातकार का फल है ।

१०१. संवित् सुधामत्त साधू - भृंग पद्म महावन :-

मधुपान कर मस्त होने वाले भ्रमरों के लिये कोई बड़ा विशाल पद्मवन मिल गया हो, वैसे ही अर्बुद पर्वत को पाकर साधूपुरुष साधनाजन्य स्वानन्दामृत का आस्वादन कर ह्रींकार नाद करते रहते हैं ।

१०४. समावेश-शतस्फूर्ति :-

वह अर्बुदाचल जहाँ "समावेश" की अनेकानेक स्फुरण साधक-अन्तःकरण में उदित होते रहते हैं । विस्मृति हटने पर जिस प्रकार किसी प्राप्त वस्तु की स्मृति का ज्ञान अन्दर प्रकट होता है, उस प्रकार आत्मतत्त्व-स्वरूप ज्ञान अपने आप हृदय के अन्दर अनुभूत होने लगता है । इस अनुभूति को "समावेश" कहते हैं ।

१०८. शिलायित ब्रह्मसंवित् :-

ब्रह्मज्ञान ही शिलारूप होकर साक्षात् विद्यमान है, अर्बुदाचल के रूप में । अर्थात् उस पर्वत का वास्तव उपादान, या निर्माण उद्देश्य, अखंड संवित् की अनुभूति मात्र है ।

❖ ❖ ❖

प्रदक्षिणांजलिः

अर्बुदाचल की दिव्य परिक्रमा

(अर्बुदाचल की परिक्रमा में आने वाले मुख्य तीर्थों के परिचयार्थ, गत वर्ष साधनायन के द्वारा आयोजित अर्बुद-परिक्रमा का एक विवरण नीचे दे रहे हैं ।)

महाशिवरात्री महोत्सव के उपरान्त १८ से २३ फरवरी, २००७ तक अर्बुदाचल की दिव्य परिक्रमा की गई जिसमें ५० तरु व साधकों ने पैदल परिक्रमा कर एक दिव्य अनुभूति को महसूस किया ।

१८ फरवरी को सुबह संतसरोवर आश्रम से जीप द्वारा तलेटी स्थित श्रीमुखरी माता मन्दिर पहुंचे । पूज्यश्री ने निर्विघ्न यात्रा का संकल्प करवा कर झंडी दिखा कर रवाना किया । आगे जाकर सर्वप्रथम हृषीकेशजी के दर्शन कर, मधुसूदनजी(माधवाजी) में रात्रि विश्राम से पहले पूज्यश्री के आर्शीवचन व ऊर्जा को प्राप्त किया ।

दूसरे दिन १९ फरवरी को इस परिक्रमा की सबसे कठिन यात्रा प्रारम्भ हुई । सोमनाथ होते हुए पहाड़ों पर खड़ी चढाई व दुर्गम रास्तों को पार करते हुए सूर्य मन्दिर 'करोड़ी ध्वज' पहुँचे, तथा दर्शन कर अनादरा डाक बंगले में विश्राम किया । वहां भी पूज्यश्री ने आर्शीवचन दिये ।

२० फरवरी को सुबह आगे चलते हुए काला-गोरा भैरुजी, अंजनी माँ सिद्धकाजी एवं पाड़लेश्वर का पूजन कर, पहाड़ी घने जंगलों व जंगली जानवरों के बीच में से होते हुए देवक्षेत्र (देवखेतजी) पहुंचे । वहाँ रात्रि विश्राम व सत्संग किया (यहाँ ३३ करोड़ देवी-देवताओं ने विश्राम किया था) ।

२१ फरवरी की यात्रा में ऋद्धि-सिद्धि गणपति, मातृका माता मन्दिर के दर्शन करके वासतानजी पहुंचे । वहीं पूज्यश्री की सन्निधि में नये अर्चना मन्त्रों से श्री अर्बुदाचल, भगवान शिव व श्री बद्रीनारायण का पूजन किया तथा सत्संग का लाभ मिला ।

२२ फरवरी को ईसरा, नितौड़ा, केदारेश्वर मंदिर, तुहीराम समाधि, खाखरवाड़ा होते हुए हमने काछोली स्थित गेनारामजी की समाधि में रात्रि विश्राम किया व पूज्यश्री का आशीर्वाद प्राप्त किया ।

२३ फरवरी को काशीन्द्रा काशी विश्वनाथ के मन्दिर में दर्शन-अर्चन किये और पास में स्थित अतिप्राचीन ध्वस्तप्राय: परन्तु भव्य अरण्येश्वर महादेव के पंचमुखी विशाल विग्रह देख आनन्दित हुए । आगे चलकर वापस मुखरी माता के दर्शन कर संकल्प-पूर्वक यात्रा सम्पूर्ण की । वहां से जीप द्वारा सन्तसरोवर आश्रम पहुंचे । वहाँ महिला साधकों ने परिक्रमा में जाने वालों सभी को तिलक लगाकर व माला पहनाकर स्वागत किया । उसी शाम पूज्यश्री ने आशीर्वचन और प्रतीक-चिन्ह सभी को दिये ।

२४ फरवरी की उपसंहार-सभा को पूज्यश्री ने संबोधित किया । श्री महेश हर्ष, श्री राजेन्द्र हर्ष, श्री अमित गांगुली व श्री सुधीर श्रोफ ने यात्रा के अनुभव व्यक्त किये एवं यात्रा की उत्तम व्यवस्था करनेवाले श्री भरत रावल व उनके सहयोगियों को धन्यवाद ज्ञापित किया ।

Abu Parikrama

(We give the account of last year's Abu Parikrama to convey an idea of the holy places surrounding Abu foothills.)

"Traveling is almost like talking with those of other centuries".
- Rene Descartes

This echoes the feelings of all the Sadhakas who participated in the divine *parikrama*. On 18th Feb, early morning, we gathered at Mukhrimata which is at the base of Mt. Abu. Nourished with the ambrosia of Pujyashree's Ashirvachana and his infinite blessings, all of us, aged 16 to 66 years, 50 in number in the 50th year of pujyashree's Sannyas, commenced our *parikrama*. Everyone was filled with a special exhilaration. Chanting bhajans and doing 'Mantra Jap', we did darshan of Lord Vishnu at Rishikesh. From there, enroute taking blessings of Bhadrakali Mata, we reached

Madhusudan (Madhvaji), our first night halt. Walking 20 kms at a stretch was quite an experience for majority of us. Satsang with Poojyashree in the evening dissolved our fatigue. Despite blisters and pain, the samvit resolution of all the sadhakas was loud and clear, "Listen to the call of the Divine and offer oneself to Guru-Moorti Arbud."

The 2nd day was the toughest and most beautiful part of the entire parikrama. The entire day we crossed several mountains and valleys and were right in the lap of Arbud. After doing darshan at Somnath and Devangan, we reached Karodidhvaj where an ancient and beautiful Surya Mandir is situated. After doing darshan, we proceeded to Dak Bunglow for the night's stay and had Poojya Shree's satsang sitting under a huge Banyan tree.

The 3rd morning saw the sadhakas at Anjani Mata Temple. In our onward journey, after offering pranams at the steps of Siddhkaji temple, we reached Pataleshwar Mahadev, a beautiful temple by the side of a flowing stream and surrounded by wooded mountains. After offering prayers and relaxing our tired limbs, we proceeded to Dev Kshetra, an out of the world place surrounded by forests and mountains, with an ancient Shiva temple. We stayed the night there. With no electricity and with divine vibrations all around, it was truly an electrifying experience.

The 4th day, after darshan at Vinayak Ganesh and Matar-Mataji, we reached Vastanji. There was a beautiful temple in a cave and the entire area was vibrant with the divine presence of Siddh Mahatmas who lived there in the near past. Poojya Shree did *archana* to Arbudachal and we all had divine *upadesh.* It was a memorable night stay for all of us.

Leaving Vastanji at *Brahmamuhurt*, we reached Kancholi via Kedareshwar, Tuhiram ki Dhuni and Gena Maharaj Ki Dhuni, where we stayed for the night.

The sixth morning saw us at Aranyeshwar Mahadev where the ancient Mahadev temple in dilapidated condition and with a special charm of its own, captivated all the sadhakas. From there, via Kashi Vishwanath, we all arrived at Mukhrimata, offered our gratitude to Mata and reached Sant Sarovar to a rising welcome by all the sadhakas and mahatmas at the Ashram.

In the end, I can only quote a seeker who wrote "I went because I was called. I heard because I was seeking. My intuition guided and responded to my inner quest; the spirit's longing for the self."

During the entire yatra, wherever I was, in the forest or in the cave, on the boulders or in the streams, or at Poojyashree's feet during our daily evening satsang, the words of Nguyen Long Tru, a Zen master, echoed in my mind.

"On the same spot I sit today, others came, in ages past, to sit, one thousand years, still others will come. Who is the singer and who the listener ?"

- Sudhir G. Shroff

Poojya Shree with sadhakas in Parikrama at Vastanji

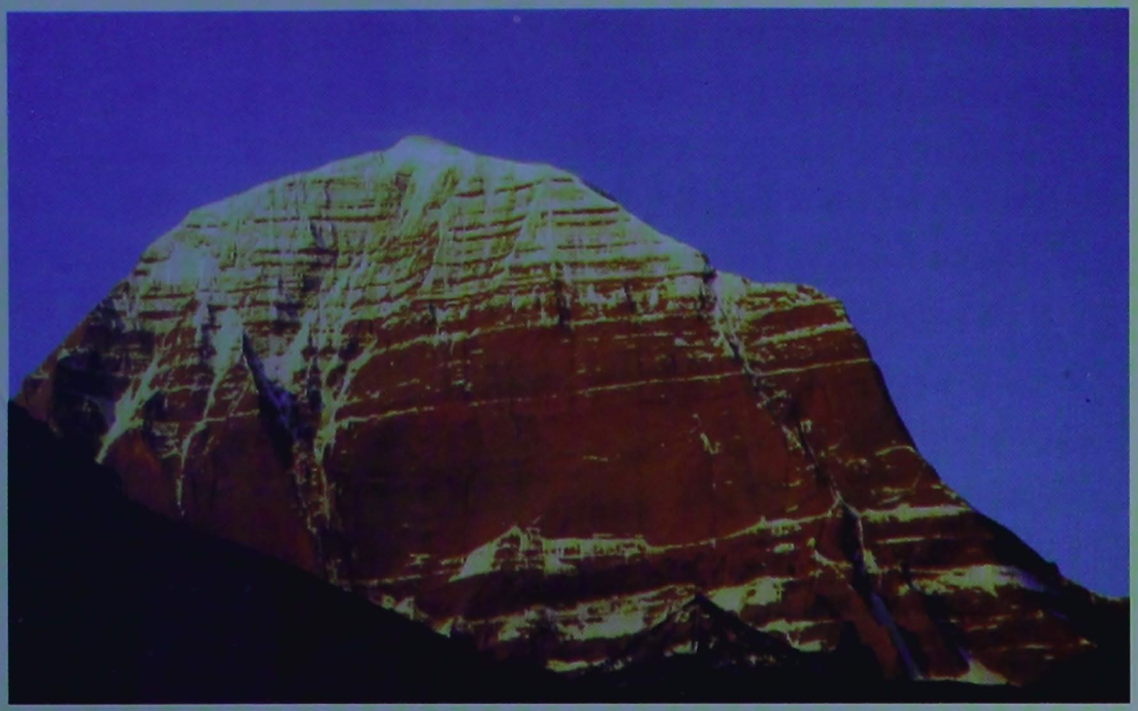

श्री कैलासांजलिः

प्रत्यग्ज्ञान-प्रकाशाब्जं पिण्डीभूतात्मवैभवम् ।
प्रसादप्रथमांकुरं श्रीकैलासगिरिं भजे ॥१॥

अट्टहासविलासं तन् निवासं शूलपाणिनः ।
अभीतिमुद्रं रुद्रस्य श्रीकैलासगिरिं भजे ॥२॥

शिलायितं समावेशं शांभवं गुरुदेशितम् ।
शैलजामांगल्यगृहं श्रीकैलासगिरिं भजे ॥३॥

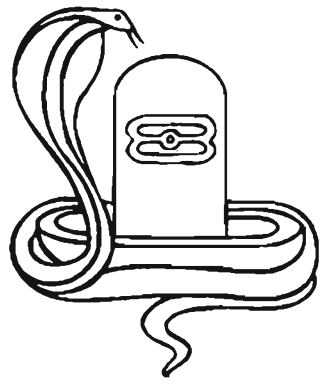

भावार्थ

आत्मज्ञान का प्रकाश कमलकली का रूप धारण किया हो, आत्मस्वरूप के अखण्ड वैभव को मानो चिह्नित कर रखा है, परब्रह्म प्रसाद अध्यात्म जीवनाकाशमें पहली बार अंकुरित हो रहा हो - ऐसी अनुभूति का विषय श्री कैलासगिरि का मैं भजन करता हूँ ॥१॥

जब भगवान शंकर आत्मानन्द के उल्लास में जोर से हंसते अट्टहास करते हैं, तब उनकी दंतपंक्ति जैसी चमकती है-वैसा लगता है श्री कैलास, जो शिव का शाश्वत निवास भी है ! जिसकी शकल याद दिलाती है भगवान रुद्र की अभयमुद्रांचित कर की, उस कैलासगिरि का मैं भजन करता हूँ ॥२॥

शांभव समावेश नामक ब्रह्मानुभूति की अवस्था जो श्रीगुरु के निर्देश से ही प्राप्त होती है, वही मानो शिलारूप होकर श्री कैलाशगिरि बनी है । शैलपुत्री पार्वती के वैवाहिक जीवन का शुभगृह बना उस पवित्र पर्वत का मैं भजन करता हूँ ॥३॥

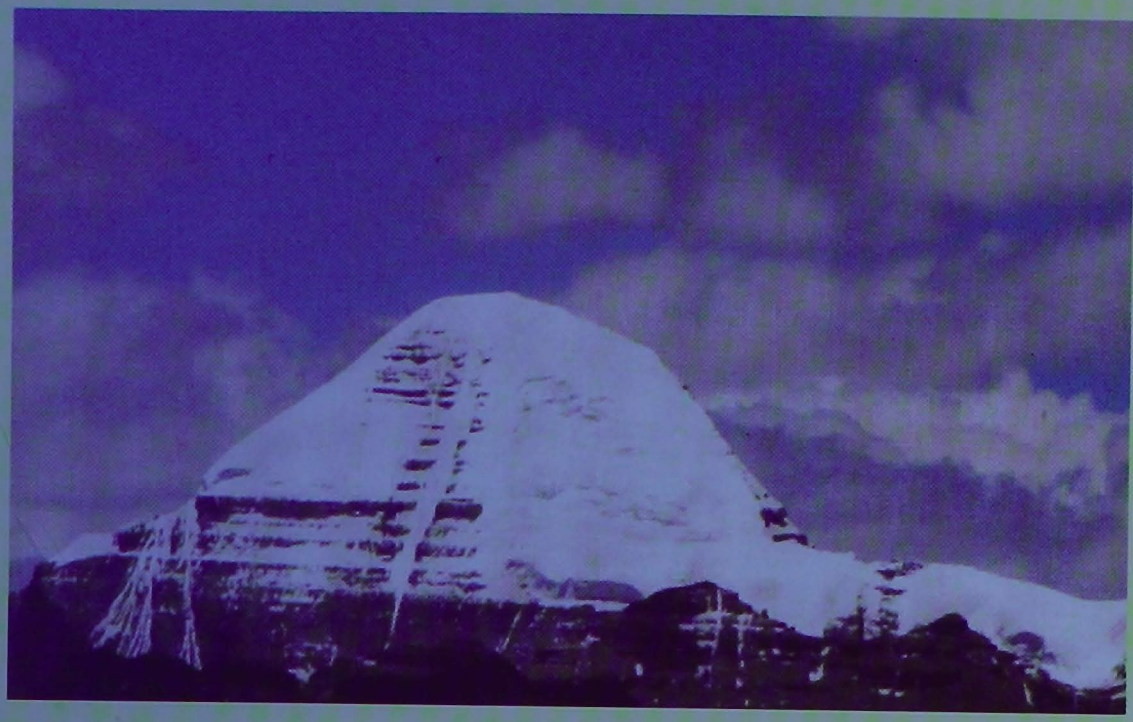

सप्तसोपानसंवित्ति-सौधीशिखरसुन्दरम् ।
सहस्त्रार-सरोजातं श्रीकैलासगिरिं भजे ॥४॥

आत्मलिंगं महालिंगं हैमलिंगं त्रिविष्टपम् ।
ईश्वरानुग्रहलिंगं श्रीकैलासगिरिं भजे ॥५॥

श्रीकैलासांजलेर्नित्यं यः करोति विमर्शनम् ।
संविन्मयं स लभते कैलासस्पर्शनं सुखम् ॥६॥

इति श्री कैलासांजलिस्तोत्रं संपूर्णम्

भावार्थ

शास्त्र में प्रसिद्ध सप्त-ज्ञानभूमिका रूपी सोपान से चढकर जिस मुक्ति-महल को प्राप्त करते हैं, उसके सुन्दर कलश जैसा है श्री कैलास । सहस्त्रार चक्र में खिलनेवाले संविन्मय कमल सदृश उस कैलास का मैं भजन करता हूँ ॥४॥

"आत्मलिंग" स्वरूप श्री कैलास, जगत में सबसे बड़ा शिवलिंग है । वह त्रिविष्टप (स्वर्ग या तिब्बत देश) में स्थित है । ईश्वर-कृपा की प्रत्यक्ष मूर्ति उस श्री कैलासगिरि का मैं भजन करता हूँ ॥५॥

"श्री कैलासांजलि" स्तोत्र का जो संवित् साधक विमर्शपूर्वक अनुसंधान करता है वह श्रीकैलास के संविन्मय स्पर्शजन्य अनुत्तम सुख का लाभ प्राप्त करेगा ॥६॥

❖ ❖ ❖

Shraddhanjali

The Land of Bharat has been blessed to have eminent seers like the Saptarishis to lay the foundations of its culture and raise a sturdy structure of moral and spiritual values, nurtured and nourished from time to time by an unbroken tradition of great Masters, who guided the course of national life. As a result, those, who renounce all worldly pleasures in order to dedicate themselves totally to spiritual perfection, have been held in high esteem by all sections of the society. Yet, frail human nature is such that very few are ready to take to a life of renunciation. Of those who do become monks, those who succeed in reaching the high standards set for them by the Masters are indeed very very rare. Shri Ramakrishna Paramahamsa used to say in response to others praising him for his life of purity and one-pointed devotion, "Don't praise a holy man until he is dead, cremated and the ashes are scattered to the quarters. Who knows when the demon of worldliness will be resurrected and manage to take-over ? " Now that Swami Shankara Samvid Giri's body has been laid to rest, we can allow the effusion of eulogiums to come pouring in from all places.

He distinguished himself from the start by becoming a "millennium monk", being ordained into *Paramahamsa Sanyasa* in the year 2000 A.D. When I pointed that he still had some years left before retirement from a high post in the illustrious institute of

NIMHANS in Bangalore, he stated that he was anxious to give sufficent time for my personally shaping his monastic life and seeing him established firmly in it. I thought he was referring to my advancing age, little realizing that he was envisaging his own span of life. No one could have foreseen the fact that only seven years were given to him to fulfill that desire.

He executed that *Saptapadi* with the sole intention of doing *guru seva*. But that *seva* involved various kinds of activities and responsibilities inevitable in running an ashrama. Most of them were entirely new to him. Some of them were even against his nature, like storing things or carrying luggage while traveling. I remember visiting his house in Bangalore for the first time in the 1990's, when I was struck by the utter barrenness of the rooms—no furniture, no furnishings, no accessories of comfort. In contrast to this, when he took charge of the ashrama at Santa Sarovara, he had to spend most of his time in a room with a cart-load of files and a computer stuffed in it. Also, he had to carry two or three cell phones wherever he went.

But gradually he came to terms with all this and threw himself whole-heartedly into the work. In the last two years, he was very much at ease and was smoothly handling all persons and situations. His entire attitude to life underwent a transformation. Particularly, devotees from far-off places arriving at the ashrama rejoiced to find some amicable person with a smiling face to receive and accommodate them. His unquestioning devotion to me and readiness to do whatever I told him, provided me also a great relief from the anxieties about the ashrama. From the work of supervising building-construction or activating the water-purification-system, to taking a class of Yoga—he was ready for any task. His services, though for a brief time, will be etched in the annals of the Sant Sarovara ashrama which will ever be grateful for, and proud of, its

association with this holy person, who set an example for how a *sishya* should serve his *guru-sthana*. It was highly symbolic that his last act was doing *guru-paduka pujan* on behalf of devotees undergoing *mantra-diksha* and, before he could climb down the stairs of "Anandalahari" hall, he was struck down.

The best medical aid available in India could not save him, and he breathed his last at 3.30 am on 11th December, 2007. The huge crowd that gathered at the ashrama for his last darshan, within hours of receiving the news, was an eloquent commentary upon the life of the departed soul. Chanting of mantras and the Lord's name continued up to noon and then his mortal frame was carried in a decorated palanquin for *parikrama* of Santa Sarovara premises before giving him *samadhi* in the traditional way prescribed for a *paramahamsa sanyasi*.

Every sanyasi is a soldier of God, ready to march when the bugle sounds, without any question or hesitation. For he knows that all things are set to The King's rhythm, all steps ultimately move towards Him only. The sanyasi sets upon that long journey with the divine assurance : "**न मे भक्तः प्रणश्यति** - My devotee never perishes".

Swami Shankara Samvid Giri laid down his life in the battle-field of *sanyasa-dharma- kshetra.* In shastra's view-point, he is indeed blessed.

❖ ❖ ❖

In the following pages, some suggestive photographs of Swami Shankara Samvid Giri, pertaining to a few significant moments of his life, have been offered.

स्वामी शंकर संवित् गिरि

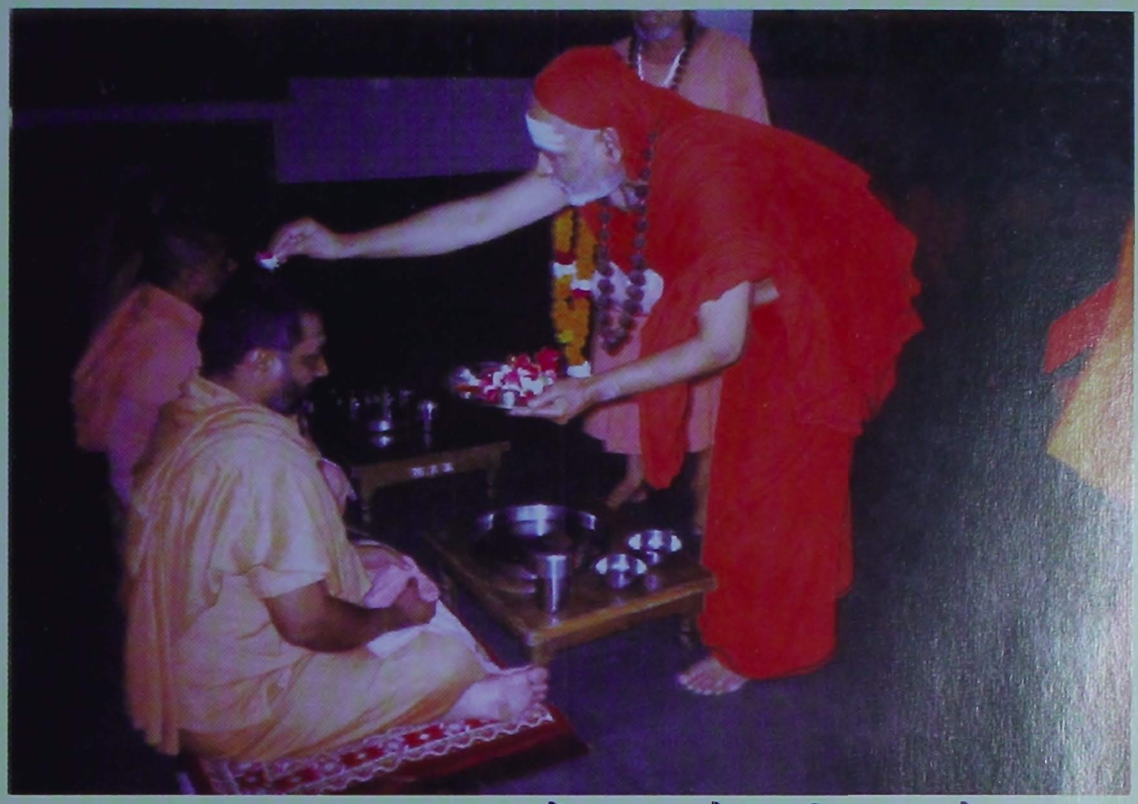

कनखल साधना सदन आश्रम में महामण्डलेश्वर की पूजा करते हुए

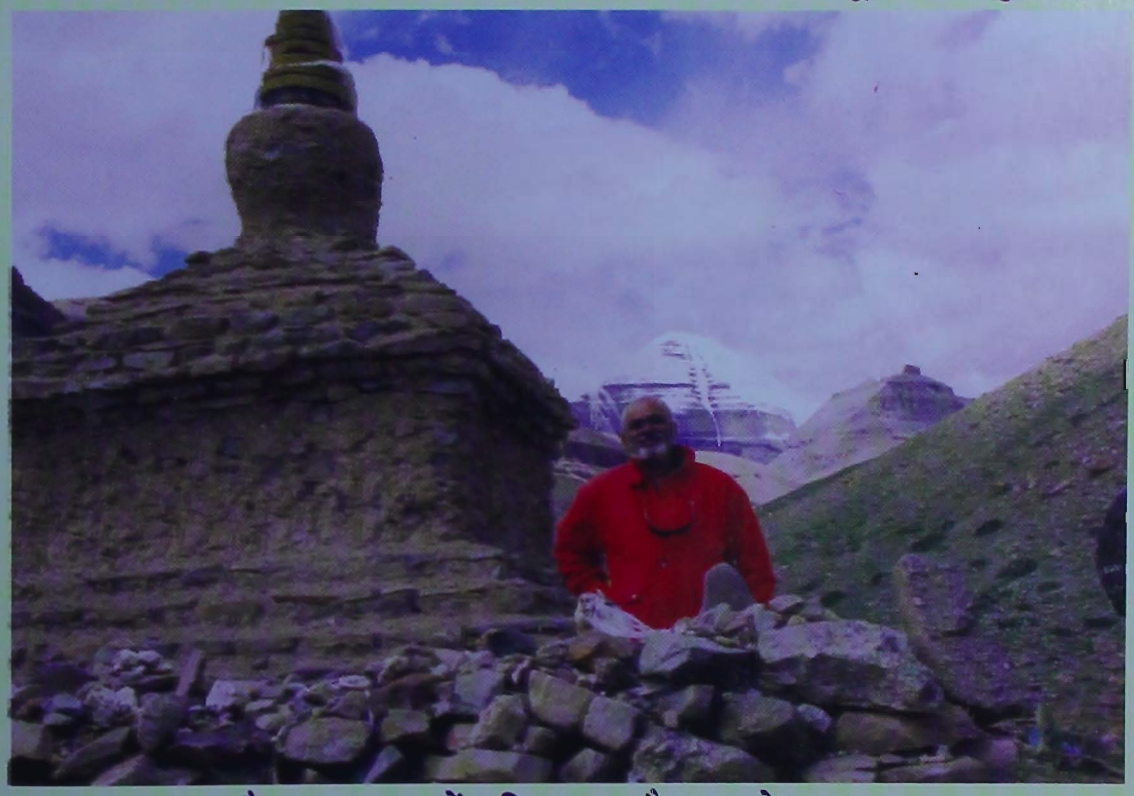

कैलाश-यात्रा में दक्षिणमुख कैलाश के सन्मुख

श्रीशैल में गुरुमण्डल पूजा करते हुए

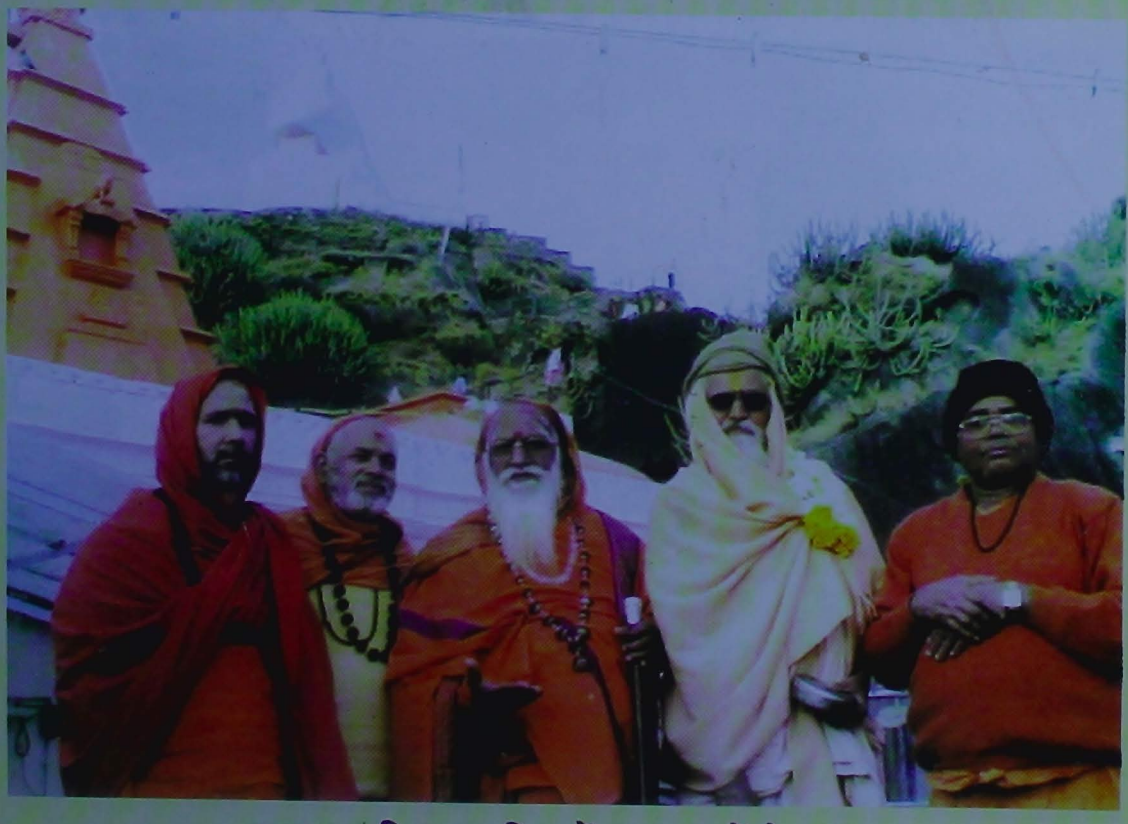

आबू गुरुशिखर मन्दिर में महात्माओं के साथ

आबू के अमृतोत्सव में अर्बुदाचल की परिक्रमा करते हुए

श्री शंकरालोक अमृतोत्सव में पूज्यश्री का परामर्श लेते हुए

परमहंस परिव्राजकाचार्य
प. पू. स्वामी श्री ईश्वरानन्दगिरिजी
सन्तसरोवर, आबूपर्वत

अर्बुदांजलिः

सर्वसिद्धिप्रद अर्बुदाचल के
नामों से निर्मित स्तोत्र

★

अर्चना उपयोगी
नामावलि-व्याख्या सहित

★

श्री कैलास पर्वत स्तुति की
सर्वप्रथम प्रस्तुति -
भावार्थान्वित

★

पर्वतराज हिमालय को उपास्य देवरूप में भारतवर्ष के ऋषि-मुनि, साम्राट-कवि, आचार्य-गुरुजनों ने प्राचीन काल से ही प्रतिष्ठित किया था। उसकी उपासना की परंपरा प्रवाहित होकर इस देश की चारों दिशा में स्थित प्रमुख पुण्यपर्वतों को भी विषय करती है। गोवर्धन, गिरनार, अरुणगिरि (तिरुवण्णामलै) आदि पहाड़ों की परिक्रमा अद्यावधि प्रसिद्ध है। इसी कोटी में राजस्थान के अर्बुदाचल (आबू) का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस शैलोत्तम का, पूज्य श्री द्वारा, चतुर्युग (४८ वर्ष) सतत सेवन से साक्षात्कृत अर्बुदस्वरूप इस प्रकाशन-पुस्तिका में प्रकटित है। अर्बुद की पहचान व उपासना को सर्वजन-साधारण के लिए उपलब्ध कराने का यह हमारा लघु प्रयास है।

- प्रकाशक